Legal Research Development
An International Refereed e-Journal
ISSN: 2456-3870, Journal home page: http://www.lrdjournal.com
Vol. 10, Issue-I, Sep. 2025

भारतीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगजनों के अधिकार एवं उनका क्रियान्वयनः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (Rights of Persons with Disabilities and Their Implementation in the Indian Perspective: An Analytical Study)

Vivek Kumar Singh[a,*]

[a]*Assistant Professor in Law, Govt. Law College Agar Malwa, Samrat Vikramaditya University, Ujjain, Madhya Pradesh (India).*

KEYWORDS

दिव्यांगजन, भारतीय विधिक ढाँचा, दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, क्रियान्वयन, सामाजिक न्याय, समावेशी विकास, दिव्यांगजनों के अधिकार।

ABSTRACT

दिव्यांगजन हमारे समाज का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इनके साथ में बहुत प्रकार से उपेक्षापूर्ण एवं अन्यायपूर्ण व्यवहार कई दशकों से देखने को मिला है और इनके अधिकारों की अनदेखी की जाती रही है। पिछले कुछ दशकों में हमारे देश में दिव्यांगजनों के लिए बहुत कुछ बदला है। पहले के मुकाबले अब इनके अधिकारों को महत्व दिया जा रहा है और इन्हें सशक्त बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं। यह बदलाव हमारे संविधान में भी दिखाई देता है और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी भारत ने कई जिम्मेदारियाँ उठाई हैं। दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 जैसे कानून बनाए गए हैं जो दिव्यांगजनों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। लेकिन अभी भी इन अधिकारों को सही से लागू करना एक बड़ी चुनौती है। यह शोध लेख भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों और उनके व्यावहारिक क्रियान्वयन का विश्लेषण करता है। इसमें समानता, गरिमा और सामाजिक समावेशन सुनिश्चित करने के लिए बनाए गए संवैधानिक, वैधानिक और नीतिगत प्रावधानों की जांच की गई है। साथ ही, यह उन प्रशासनिक, सामाजिक और संरचनात्मक बाधाओं का विश्लेषण करता है जो दिव्यांगजनों के अधिकारों की प्रभावी प्राप्ति में रुकावट पैदा करती हैं। इस अध्ययन में विधिक प्रावधानों, न्यायिक निर्णयों और सरकारी प्रतिवेदनों के सैद्धांतिक विश्लेषण के आधार पर क्रियान्वयन तंत्र की प्रमुख कमियों को उजागर किया गया है। इसके अलावा, संस्थागत जवाबदेही और समावेशी शासन को मजबूत करने के लिए आवश्यक सुधारात्मक उपायों का सुझाव दिया गया है। यह शोध लेख दिव्यांगजनों के अधिकारों की प्रभावी प्राप्ति में मदद करने के लिए एक महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है।

1. परिचय

किसी भी लोकतांत्रिक समाज की प्रगति का वास्तविक आकलन इस बात से किया जाता है कि वह अपने समाज के सबसे अधिक संवेदनशील और हाशिए पर स्थित वर्गों के अधिकारों की कितनी प्रभावी रूप से रक्षा करता है। भारतीय समाज में दिव्यांगजन एक ऐसा ही वर्ग हैं, जिन्हें ऐतिहासिक रूप से सामाजिक उपेक्षा, भेदभाव तथा अवसरों की असमानता का सामना करना पड़ा है। यद्यपि भारतीय संविधान समानता, गरिमा और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों पर आधारित है, तथापि व्यवहारिक स्तर पर दिव्यांगजनों को अपने अधिकारों के पूर्ण उपभोग में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

Corresponding author
****E-mail:** vk979661@gmail.com (Vivek Kumar Singh).
https://orcid.org/0009-0003-4909-1759
DOI: https://doi.org/10.53724/lrd/v10n1.3
Received 6th July 2025; Accepted 15th August 2025
Available online 30th September 2025
2456-3870/©2025 The Journal. Publisher: Welfare Universe. This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों को लेकर धीरे–धीरे नीतिगत और विधिक चेतना का विकास हुआ। प्रारंभ में दिव्यांगता को मुख्यतः दया और कल्याण के दृष्टिकोण से देखा गया, किंतु समय के साथ यह दृष्टिकोण अधिकार–आधारित स्वरूप में परिवर्तित हुआ। इस परिवर्तन की परिणति दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 के रूप में हुई, जिसने दिव्यांगजनों को शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, आवागमन और सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में समान अवसर और संरक्षण प्रदान करने का प्रयास किया।[1]

हालाँकि, कानूनों और नीतियों का निर्माण अपने आप में पर्याप्त नहीं होता, जब तक उनका प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित न किया जाए। भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि विधायी प्रावधानों और जमीनी वास्तविकताओं के मध्य एक उल्लेखनीय अंतर विद्यमान है। प्रशासनिक उदासीनता, संसाधनों की कमी, सामाजिक पूर्वाग्रह तथा जागरूकता के अभाव जैसे कारक दिव्यांगजनों के अधिकारों के क्रियान्वयन को प्रभावित करते हैं।[2] ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि न केवल उपलब्ध अधिकारों का अध्ययन किया जाए, बल्कि उनके क्रियान्वयन की वास्तविक स्थिति का भी विश्लेषण किया जाए।

वर्तमान अध्ययन इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए भारतीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगजनों के अधिकारों तथा उनके क्रियान्वयन का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि वर्तमान विधिक एवं नीतिगत ढाँचा किस सीमा तक दिव्यांगजनों को सशक्त बना पा रहा है और किन क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता है। इस प्रकार, यह शोध न केवल अकादमिक दृष्टि से, बल्कि सामाजिक न्याय और समावेशी विकास की दिशा में भी विशेष महत्त्व रखता है।[3]

2. अध्ययन की पृष्ठभूमि

भारतीय समाज में बहुत सारी विविधताएं हैं। यहाँ लोगों की स्थिति उनकी सामाजिक, आर्थिक और शारीरिक स्थिति के आधार पर तय होती है। दिव्यांगजन भी इस समाज का एक हिस्सा हैं, लेकिन इतिहास में उन्हें अक्सर अलग रखा गया है। पुराने समय में लोग दिव्यांगता को भगवान की मर्जी या व्यक्ति के नसीब की खराबी से जोड़ते थे, जिस वजह से दिव्यांग लोगों को समाज में शामिल होने और अपने पैरों पर खड़े होने के अवसर कम मिले।[4]

स्वतंत्रता मिलने के बाद भारत ने एक ऐसे देश के रूप में काम करना शुरू किया जो लोगों की भलाई के लिए काम करता है। हमने सामाजिक न्याय, समानता और गरिमा जैसे मूल्यों को अपनाया। भारतीय संविधान में समानता के अधिकार और राज्य के नीति–निर्देशक तत्वों ने समाज के कमजोर वर्गों के लिए संरक्षण की नींव रखी, जिनमें दिव्यांगजन भी शामिल हैं।

हालांकि, शुरुआती दशकों में दिव्यांगता से संबंधित नीतियाँ मुख्यतः दया, सहायता और पुनर्वास तक ही सीमित रहीं। दिव्यांगजनों के अधिकारों की स्पष्ट अभिव्यक्ति नहीं हो पाई।[5]

बीसवीं शताब्दी के अंतिम भाग में, दुनिया भर में मानवाधिकार आंदोलन ने जोर पकड़ा, जिससे दिव्यांगता के प्रति हमारे विचार बदलने लगे। अब लोग दिव्यांगता को सिर्फ एक चिकित्सीय समस्या के रूप में नहीं देखते हैं, बल्कि यह समझने लगे हैं कि यह सामाजिक बाधाओं और असमानताओं का परिणाम है। इस बदलाव का असर भारत पर भी पड़ा, जिससे कानूनी और नीतिगत सुधारों की दिशा में कदम बढ़े। दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 एक महत्वपूर्ण उदाहरण है, जो दिव्यांगजनों को समान अवसर प्रदान करता है, उन्हें भेदभाव से बचाता है, और पूरी तरह से समाज में भाग लेने का अधिकार देता है।[6]

इसके बावजूद, एक और बात सामने आती है कि कानूनी नियमों के होने के बाद भी उनका पालन अच्छी तरह से नहीं हो पा रहा है। कई सरकारी योजनाएँ और अधिकार वास्तविक जीवन में उम्मीद के मुताबिक परिणाम नहीं दे पा रही हैं, जिससे कानून और हकीकत के बीच का फासला साफ दिखाई देता है। प्रशासन में कमियाँ, समाज में गलत धारणाएँ, संसाधनों की कमी और जानकारी का न होना इस फासले को और बढ़ाते हैं।[7]

इसी पृष्ठभूमि में प्रस्तुत अध्ययन यह समझने का प्रयास करता है कि भारतीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगजनों के अधिकारों का विकास किस प्रकार हुआ है और वर्तमान में उनके प्रभावी क्रियान्वयन में कौन–कौन सी बाधाएँ विद्यमान हैं। यह अध्ययन न केवल विधिक ढाँचे का परीक्षण करता है, बल्कि सामाजिक यथार्थ के संदर्भ में उसके व्यवहारिक प्रभावों का भी विश्लेषण करता है, जिससे दिव्यांगजनों के लिए अधिक समावेशी और न्यायपूर्ण व्यवस्था की दिशा में ठोस सुझाव प्रस्तुत किए जा सकें।

3. समस्या का कथन

भारतीय संविधान और कई कानूनी तथा नीतिगत नियमों के माध्यम से दिव्यांग लोगों को समानता, सम्मान और समान अवसर प्रदान करने का वादा किया गया है। खासकर दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 ने दिव्यांग लोगों के अधिकारों को स्पष्ट रूप से बताया है और शिक्षा, नौकरी, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा और सार्वजनिक जीवन में उनकी पूरी भागीदारी सुनिश्चित करने का लक्ष्य रखा है। लेकिन इन कानूनी नियमों के बावजूद, भारतीय समाज में दिव्यांग लोगों की वास्तविक स्थिति अभी भी संतोषजनक नहीं है।[8]

वास्तव में देखा जाता है कि कई दिव्यांगजन अपने कानूनी अधिकारों के बारे में जानकारी नहीं रखते या उन्हें प्राप्त करने में सक्षम नहीं होते। सरकारी योजनाओं और नीतियों को लागू करने में कुछ समस्याएँ आती हैं, जैसे कि प्रशासनिक जटिलताएँ, संसाधनों की कमी, संगठन में कमी और जवाबदेही का अभाव। यह सारी समस्याएँ साफ़ दिखाई देती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि कानून और उसके क्रियान्वयन के बीच में एक बड़ा अंतर पैदा हो जाता है, जो दिव्यांगजनों के समाज में शामिल होने और सशक्त बनने में बहुत बड़ी रुकावट बन जाता है।[9]

इसके अलावा, सामाजिक दृष्टिकोण और मानसिकता भी एक बड़ी समस्या है। दिव्यांगता को अक्सर सहानुभूति या दया के नज़रिए से देखा जाता है, न कि अधिकार और समान नागरिकता के नजरिए से। यह सामाजिक सोच न केवल दिव्यांग लोगों की आत्मनिर्भरता को प्रभावित करती है, बल्कि उनके लिए मौजूद कानूनी संरक्षणों की प्रभावशीलता को भी कमजोर करती है।[10]

अतः मूल समस्या यह है कि भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों के लिए एक सुदृढ़ विधिक ढाँचा होने के बावजूद, उनका प्रभावी और समान रूप से क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है। यह स्थिति यह प्रश्न उठाती है कि वर्तमान कानून और नीतियाँ व्यवहार में किस सीमा तक सफल हैं तथा किन संरचनात्मक, प्रशासनिक और सामाजिक कारकों के कारण दिव्यांगजनों को अपने अधिकारों के पूर्ण लाभ से वंचित रहना पड़ता है। प्रस्तुत अध्ययन इसी समस्या को केंद्र में रखकर दिव्यांगजनों के अधिकारों और उनके क्रियान्वयन की वास्तविक स्थिति का विश्लेषण करने का प्रयास करता है।[11]

4. अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारतीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगजनों के अधिकारों तथा उनके प्रभावी क्रियान्वयन की स्थिति का समग्र एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। इस व्यापक उद्देश्य की पूर्ति हेतु अध्ययन के निम्नलिखित विशिष्ट उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं–

(1) भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों के विकास की

संवैधानिक एवं विधिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।

(2) 'दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016' तथा उससे संबंधित नीतियों और योजनाओं के प्रमुख प्रावधानों का विश्लेषण करना।

(3) शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य तथा सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में दिव्यांगजनों के अधिकारों के क्रियान्वयन की वास्तविक स्थिति का मूल्यांकन करना।

(4) दिव्यांगजनों के अधिकारों के प्रभावी क्रियान्वयन में विद्यमान प्रशासनिक, सामाजिक एवं संरचनात्मक बाधाओं की पहचान करना।

(5) न्यायिक निर्णयों एवं संवैधानिक व्याख्याओं के माध्यम से दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण में न्यायपालिका की भूमिका का परीक्षण करना।

(6) अंतरराष्ट्रीय मानकों, विशेष रूप से संयुक्त राष्ट्र दिव्यांग अधिकार अभिसमय, के आलोक में भारतीय विधिक ढाँचे की तुलनात्मक समीक्षा करना।

(7) अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर दिव्यांगजनों के अधिकारों के अधिक प्रभावी एवं समावेशी क्रियान्वयन हेतु सुधारात्मक सुझाव प्रस्तुत करना।

5. अनुसंधान प्रश्न / परिकल्पनाएँ

प्रस्तुत शोध अध्ययन भारतीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगजनों के अधिकारों तथा उनके क्रियान्वयन की वास्तविक स्थिति का विश्लेषण करने हेतु कुछ मूलभूत अनुसंधान प्रश्नों एवं परिकल्पनाओं पर आधारित है। ये प्रश्न और परिकल्पनाएँ अध्ययन की दिशा और सीमाओं को स्पष्ट करने में सहायक हैं तथा शोध को एक तार्किक ढाँचा प्रदान करते हैं।

5.1 अनुसंधान प्रश्न

(1) भारतीय संविधान एवं विधिक ढाँचे में दिव्यांगजनों के अधिकारों को किस प्रकार मान्यता प्रदान की गई है?

(2) दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 के प्रावधान व्यवहारिक स्तर पर किस सीमा तक प्रभावी रूप से क्रियान्वित हो रहे हैं?

(3) शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सुरक्षा जैसे प्रमुख क्षेत्रों में दिव्यांगजनों को किन प्रकार की समस्याओं और बाधाओं का सामना करना पड़ता है?

(4) दिव्यांगजनों के अधिकारों के क्रियान्वयन में प्रशासनिक तंत्र की भूमिका कितनी प्रभावी है?

(5) न्यायपालिका द्वारा दिए गए निर्णय दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण एवं विस्तार में किस प्रकार सहायक सिद्ध हुए हैं?

(6) भारतीय विधिक व्यवस्था अंतरराष्ट्रीय मानकों, विशेष रूप से संयुक्त राष्ट्र दिव्यांग अधिकार अभिसमय, के अनुरूप किस हद तक है?

5.2 अनुसंधान परिकल्पनाएँ

(1) यह परिकल्पना है कि भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों के लिए पर्याप्त विधिक प्रावधान मौजूद हैं, किंतु उनके प्रभावी क्रियान्वयन में गंभीर कमी पाई जाती है।

(2) यह परिकल्पना है कि प्रशासनिक उदासीनता, संसाधनों की कमी तथा समन्वय के अभाव के कारण दिव्यांगजनों को अपने वैधानिक अधिकारों का पूर्ण लाभ नहीं मिल पाता।

(3) यह परिकल्पना है कि सामाजिक दृष्टिकोण और जागरूकता की कमी दिव्यांगजनों के अधिकारों के क्रियान्वयन में एक प्रमुख बाधा के रूप में कार्य करती है।

(4) यह परिकल्पना है कि न्यायिक हस्तक्षेप ने दिव्यांगजनों के अधिकारों को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, परंतु अकेले न्यायपालिका के प्रयास पर्याप्त नहीं हैं।

(5) यह परिकल्पना है कि यदि भारतीय नीतियों और योजनाओं को अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप अधिक प्रभावी ढंग से लागू किया जाए, तो दिव्यांगजनों की

सामाजिक सहभागिता और सशक्तिकरण में उल्लेखनीय सुधार संभव है।

6. दिव्यांगता की अवधारणा एवं प्रकार

दिव्यांगता की अवधारणा समय के साथ निरंतर विकसित होती रही है। प्रारंभिक काल में दिव्यांगता को मुख्यतः चिकित्सीय समस्या के रूप में देखा जाता था, जहाँ व्यक्ति की शारीरिक या मानसिक अक्षमता को ही उसकी सामाजिक असक्षमता का कारण माना जाता था। इस दृष्टिकोण में दिव्यांग व्यक्ति को उपचार, पुनर्वास या सहानुभूति का पात्र समझा जाता था, न कि अधिकारों से युक्त एक समान नागरिक के रूप में।[12] किंतु आधुनिक मानवाधिकार विमर्श में इस सोच में व्यापक परिवर्तन आया है। अब दिव्यांगता को केवल व्यक्ति की शारीरिक या मानसिक स्थिति तक सीमित न मानकर, समाज में विद्यमान भौतिक, सामाजिक और संस्थागत बाधाओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न स्थिति के रूप में समझा जाता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगता की अवधारणा को विधिक मान्यता दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 के माध्यम से प्राप्त हुई है। इस अधिनियम के अनुसार, दिव्यांग व्यक्ति वह है जिसे दीर्घकालिक शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक अथवा संवेदी अक्षमता हो, जो विभिन्न बाधाओं के साथ अंतःक्रिया करते हुए उसे समाज में पूर्ण और प्रभावी सहभागिता से वंचित करती है।[13] यह परिभाषा अधिकार–आधारित दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करती है तथा दिव्यांगता को सामाजिक समावेशन और समान अवसर के संदर्भ में देखने पर बल देती है।

दिव्यांगता के प्रकारों की बात करें तो, दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 ने दिव्यांगता की श्रेणियों का विस्तार करते हुए कुल 21 प्रकार की दिव्यांगताओं को मान्यता प्रदान की है। इन प्रकारों को सामान्यतः निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है–

(1) शारीरिक दिव्यांगता, जिसमें दृष्टिबाधितता, श्रवण बाधितता, गतिशीलता से संबंधित अक्षमताएँ तथा अंग–भंग जैसी स्थितियाँ सम्मिलित हैं।

(2) मानसिक एवं बौद्धिक दिव्यांगता, जिसके अंतर्गत मानसिक रोग, बौद्धिक अक्षमता, आत्मकेंद्रितता आदि को शामिल किया गया है।

(3) संवेदी दिव्यांगता, जिसमें दृष्टि और श्रवण से संबंधित दीर्घकालिक बाधाएँ आती हैं।

(4) बहुविध दिव्यांगता, जहाँ एक व्यक्ति में एक से अधिक प्रकार की दिव्यांगता पाई जाती है।[14]

दिव्यांगता के इन विभिन्न प्रकारों की पहचान का उद्देश्य केवल वर्गीकरण करना नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करना है कि प्रत्येक प्रकार की दिव्यांगता से ग्रस्त व्यक्तियों की विशिष्ट आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त नीतियाँ और संरक्षणात्मक उपाय विकसित किए जा सकें। अतः दिव्यांगता की अवधारणा और उसके प्रकारों की स्पष्ट समझ, दिव्यांगजनों के अधिकारों के प्रभावी क्रियान्वयन की दिशा में एक आवश्यक आधार प्रदान करती है।[15]

7. भारत में दिव्यांगजनों की स्थितिः एक सांख्यिकीय अवलोकन (जनगणना, NSSO[16] एवं सरकारी रिपोर्ट्स के आधार पर)

भारत में दिव्यांगजनों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को समझने के लिए सांख्यिकीय आँकड़े एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करते हैं। ये आँकड़े न केवल दिव्यांगजनों की जनसंख्या का अनुमान प्रस्तुत करते हैं, बल्कि शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सहभागिता के क्षेत्रों में उनकी वास्तविक स्थिति को भी उजागर करते हैं। भारत में दिव्यांगजनों से संबंधित प्रमुख आँकड़े मुख्यतः जनगणना, राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन तथा विभिन्न सरकारी रिपोर्ट्स के माध्यम से उपलब्ध होते हैं।

जनगणना 2011 के अनुसार, भारत में दिव्यांगजनों की कुल संख्या लगभग 2.68 करोड़ दर्ज की गई, जो देश की

कुल जनसंख्या का लगभग 2.21 प्रतिशत है।[17] इनमें पुरुषों की संख्या महिलाओं की तुलना में अधिक पाई गई, जिससे यह संकेत मिलता है कि महिलाओं में दिव्यांगता का पंजीकरण अपेक्षाकृत कम हो सकता है। जनगणना के आँकड़े यह भी दर्शाते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में दिव्यांगजनों की संख्या शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक है, जो स्वास्थ्य सुविधाओं की असमान उपलब्धता तथा जागरूकता के अभाव को इंगित करता है।[18]

दिव्यांगता के प्रकारों के संदर्भ में जनगणना 2011 में दृष्टि बाधितता, श्रवण बाधितता, गतिशीलता से संबंधित दिव्यांगता तथा मानसिक दिव्यांगता को प्रमुख श्रेणियों के रूप में वर्गीकृत किया गया। इनमें गतिशीलता से संबंधित दिव्यांगता सर्वाधिक पाई गई, जबकि मानसिक एवं बौद्धिक दिव्यांगता की पहचान अपेक्षाकृत कम दर्ज की गई, जो सामाजिक कलंक और पहचान की कठिनाइयों की ओर संकेत करती है।[19]

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन की विभिन्न रिपोर्ट्स, विशेष रूप से 76वें दौर की रिपोर्ट, यह स्पष्ट करती हैं कि दिव्यांगजनों की साक्षरता दर सामान्य जनसंख्या की तुलना में काफी कम है। रोजगार के क्षेत्र में भी दिव्यांगजनों की भागीदारी सीमित पाई गई है, जहाँ बड़ी संख्या में दिव्यांगजन या तो बेरोजगार हैं या असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं। यह स्थिति इस तथ्य को रेखांकित करती है कि आरक्षण और रोजगार संबंधी नीतियों के बावजूद व्यवहारिक स्तर पर अपेक्षित लाभ नहीं पहुँच पा रहा है।[20]

सरकारी रिपोर्ट्स यह भी दर्शाती हैं कि दिव्यांगजनों को स्वास्थ्य सेवाओं, सहायक उपकरणों तथा पुनर्वास सुविधाओं तक पहुँच में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। यद्यपि केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा विभिन्न योजनाएँ संचालित की जा रही हैं, तथापि उनके लाभार्थियों की संख्या सीमित है और क्षेत्रीय असमानताएँ स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती हैं।[21]

उपरोक्त सांख्यिकीय अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि भारत में दिव्यांगजनों की संख्या उल्लेखनीय होने के बावजूद उनकी सामाजिक–आर्थिक स्थिति संतोषजनक नहीं है। यह स्थिति न केवल प्रभावी नीति निर्माण की आवश्यकता को रेखांकित करती है, बल्कि उपलब्ध अधिकारों और योजनाओं के बेहतर क्रियान्वयन की अनिवार्यता को भी उजागर करती है।

8. दिव्यांगजनों के अधिकारों का संवैधानिक आधार

भारतीय संविधान सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय गरिमा के मूल्यों पर आधारित है। यद्यपि संविधान में "दिव्यांगजन" शब्द का प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं मिलता, तथापि इसके विभिन्न प्रावधान दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए एक सुदृढ़ संवैधानिक आधार प्रदान करते हैं। संविधान के मौलिक अधिकार, राज्य के नीति–निर्देशक तत्व तथा समानता एवं सामाजिक न्याय से संबंधित सिद्धांत मिलकर दिव्यांगजनों के अधिकारों को वैधानिक और नैतिक समर्थन प्रदान करते हैं।

(क) मौलिक अधिकार

भारतीय संविधान के भाग–III में निहित मौलिक अधिकार दिव्यांगजनों के लिए भी समान रूप से लागू होते हैं। अनुच्छेद 14 कानून के समक्ष समानता और विधि के समान संरक्षण का अधिकार प्रदान करता है, जो यह सुनिश्चित करता है कि दिव्यांगजनों के साथ किसी प्रकार का मनमाना या भेदभावपूर्ण व्यवहार न किया जाए।[22] इसी प्रकार, अनुच्छेद 15 राज्य को धर्म, जाति, लिंग आदि के आधार पर भेदभाव से रोकता है, जिसकी व्यापक व्याख्या में शारीरिक या मानसिक अक्षमता के आधार पर भेदभाव का निषेध भी अंतर्निहित है।

अनुच्छेद 21, जो जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की गारंटी देता है, न्यायिक व्याख्याओं के माध्यम से गरिमापूर्ण जीवन, स्वास्थ्य, शिक्षा और आजीविका के

अधिकार को भी सम्मिलित करता है। इस दृष्टि से दिव्यांगजनों को सम्मानपूर्वक जीवन जीने और समाज में पूर्ण सहभागिता का संवैधानिक अधिकार प्राप्त होता है।[23]

(ख) राज्य के नीति–निर्देशक तत्व

संविधान के भाग–IV में निहित राज्य के नीति–निर्देशक तत्व यद्यपि न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं हैं, तथापि वे राज्य के लिए नीति निर्माण में मार्गदर्शक सिद्धांत के रूप में कार्य करते हैं। अनुच्छेद 38 राज्य को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय सुनिश्चित करने का निर्देश देता है, जबकि अनुच्छेद 41 राज्य को यह दायित्व सौंपता है कि वह अपनी आर्थिक क्षमता के भीतर बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी एवं दिव्यांगता की स्थिति में नागरिकों को सहायता प्रदान करे।[24]

इसी प्रकार, अनुच्छेद 46 समाज के दुर्बल वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों की रक्षा पर बल देता है, जिसका लाभ दिव्यांगजनों को भी प्राप्त होता है। ये प्रावधान यह स्पष्ट करते हैं कि संविधान निर्माताओं की मंशा एक ऐसे कल्याणकारी राज्य की स्थापना की थी, जिसमें दिव्यांगजनों सहित सभी कमजोर वर्गों का संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके।

(ग) समानता एवं सामाजिक न्याय

समानता और सामाजिक न्याय भारतीय संविधान के मूलभूत सिद्धांत हैं, जो दिव्यांगजनों के अधिकारों की अवधारणा का आधार बनते हैं। सामाजिक न्याय का तात्पर्य केवल औपचारिक समानता से नहीं, बल्कि वास्तविक समान अवसर उपलब्ध कराने से है। इस संदर्भ में दिव्यांगजनों के लिए विशेष प्रावधान, जैसे आरक्षण, सहायक सुविधाएँ और सकारात्मक भेदभाव, समानता के सिद्धांत के विपरीत न होकर उसके पूरक हैं।[25]

भारतीय न्यायपालिका ने भी समय–समय पर यह स्पष्ट किया है कि समानता का अर्थ समान परिस्थितियों में समान व्यवहार है, न कि असमान परिस्थितियों में समानता का दिखावटी अनुप्रयोग। अतः दिव्यांगजनों के लिए विशेष संरक्षण और सुविधाएँ प्रदान करना संवैधानिक रूप से न्यायसंगत एवं आवश्यक है।

इस प्रकार, मौलिक अधिकारों, नीति–निर्देशक तत्वों तथा समानता एवं सामाजिक न्याय के सिद्धांतों के माध्यम से भारतीय संविधान दिव्यांगजनों के अधिकारों को एक व्यापक और सुदृढ़ संवैधानिक आधार प्रदान करता है, जो आगे चलकर विधायी एवं नीतिगत उपायों के लिए मार्ग प्रशस्त करता है।

9. दिव्यांगजनों से संबंधित प्रमुख कानून एवं नीतियाँ

भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण एवं सशक्तिकरण हेतु समय–समय पर अनेक विधिक एवं नीतिगत उपाय किए गए हैं। इन उपायों का उद्देश्य दिव्यांगजनों को समान अवसर प्रदान करना, भेदभाव को समाप्त करना तथा उन्हें सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक रूप से मुख्यधारा में सम्मिलित करना है। प्रमुख रूप से दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, राष्ट्रीय दिव्यांगजन नीति तथा शिक्षा, रोजगार एवं आरक्षण से संबंधित प्रावधान इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(1) दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016– दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों से संबंधित सबसे व्यापक और महत्वपूर्ण कानून है। यह अधिनियम संयुक्त राष्ट्र दिव्यांग अधिकार अभिसमय (UNCRPD) के सिद्धांतों के अनुरूप तैयार किया गया है, जिसे भारत ने वर्ष 2007 में अंगीकृत किया था।[26] इस अधिनियम ने पूर्ववर्ती दिव्यांग व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 का स्थान लिया और दिव्यांगता की श्रेणियों को 7 से बढ़ाकर 21 कर दिया।

अधिनियम के अंतर्गत दिव्यांगजनों को समानता, गरिमा, भेदभाव से संरक्षण, शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य,

सामाजिक सुरक्षा तथा सुलभता का अधिकार प्रदान किया गया है। इसके अतिरिक्त, अधिनियम में विशेष न्यायालयों की स्थापना, शिकायत निवारण तंत्र तथा दंडात्मक प्रावधानों को भी शामिल किया गया है, जिससे अधिकारों के क्रियान्वयन को अधिक प्रभावी बनाया जा सके।[27]

(2) **राष्ट्रीय दिव्यांगजन नीति–** राष्ट्रीय दिव्यांगजन नीति का उद्देश्य दिव्यांगजनों के लिए एक समग्र और समन्वित ढाँचा तैयार करना है, जिससे उनकी सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक उन्नति सुनिश्चित की जा सके। इस नीति में दिव्यांगजनों को कल्याण का विषय न मानकर अधिकारों के वाहक नागरिक के रूप में स्वीकार किया गया है।[28] नीति के अंतर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य, कौशल विकास, रोजगार, आवास तथा सामाजिक सुरक्षा जैसे क्षेत्रों में विशेष उपायों का प्रावधान किया गया है।

यह नीति राज्यों को यह निर्देश भी देती है कि वे अपनी–अपनी परिस्थितियों के अनुरूप योजनाओं का निर्माण करें तथा दिव्यांगजनों की सहभागिता सुनिश्चित करें। तथापि, नीति के प्रभावी क्रियान्वयन में राज्यों के बीच असमानता एक प्रमुख चुनौती के रूप में सामने आती है।

(3) **शिक्षा, रोजगार एवं आरक्षण संबंधी प्रावधान–** दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण में शिक्षा और रोजगार की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 के अंतर्गत दिव्यांगजनों के लिए निःशुल्क एवं समावेशी शिक्षा का प्रावधान किया गया है, विशेष रूप से 6 से 18 वर्ष की आयु के बच्चों के लिए।[29] इसके साथ ही, उच्च शिक्षा संस्थानों में सुलभता और विशेष सहायता सेवाओं पर भी बल दिया गया है।

रोजगार के क्षेत्र में सरकारी नौकरियों में दिव्यांगजनों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है। वर्तमान में केंद्र सरकार की सेवाओं में दिव्यांगजनों के लिए 4 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान है, जो विभिन्न श्रेणियों में विभाजित है।[30] यह आरक्षण समान अवसर सुनिश्चित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है, हालांकि इसके प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक व्यावहारिक कठिनियाँ देखने को मिलती हैं।

इस प्रकार, भारत में दिव्यांगजनों से संबंधित प्रमुख कानून एवं नीतियाँ एक प्रगतिशील विधिक ढाँचा प्रस्तुत करती हैं, किंतु उनकी वास्तविक सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि इन्हें व्यवहारिक स्तर पर किस सीमा तक प्रभावी ढंग से लागू किया जाता है।

10. अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांग अधिकार

दिव्यांगजनों के अधिकारों का विकास केवल राष्ट्रीय स्तर तक सीमित नहीं रहा है, बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी इसे मानवाधिकार विमर्श का एक अभिन्न अंग माना गया है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात मानवाधिकारों की सार्वभौमिक अवधारणा के उदय के साथ यह स्वीकार किया गया कि दिव्यांगता किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत कमी नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक एवं संरचनात्मक बाधाओं का परिणाम है। इसी दृष्टिकोण ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण हेतु विभिन्न घोषणाओं, मानकों और अभिसमयों को जन्म दिया।[31]

संयुक्त राष्ट्र द्वारा 1948 में अंगीकृत मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा ने समानता, गरिमा और भेदभाव–निषेध के सिद्धांतों को स्थापित किया, जो अप्रत्यक्ष रूप से दिव्यांगजनों के अधिकारों का आधार बने। इसके पश्चात 1975 में दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों की घोषणा तथा 1981 को अंतरराष्ट्रीय दिव्यांग वर्ष घोषित किया जाना इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम रहे।[32] इन पहलों ने दिव्यांगता को दया या कल्याण के विषय से हटाकर अधिकारों के संदर्भ में देखने की वैश्विक चेतना

को सुदृढ़ किया।

इस विकासक्रम का सबसे महत्वपूर्ण चरण संयुक्त राष्ट्र दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अभिसमय, 2006 के रूप में सामने आया। यह अभिसमय दिव्यांगजनों के अधिकारों से संबंधित पहला विधिक रूप से बाध्यकारी अंतरराष्ट्रीय दस्तावेज है, जो समानता, स्वतंत्रता, गरिमा और पूर्ण सहभागिता के सिद्धांतों पर आधारित है।[33] संयुक्त राष्ट्र दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अभिसमय, 2006 दिव्यांगजनों को शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, राजनीतिक सहभागिता, सुलभता तथा न्याय तक समान पहुँच का अधिकार प्रदान करता है।

भारत ने वर्ष 2007 में संयुक्त राष्ट्र दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अभिसमय, 2006 का अनुमोदन कर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यह प्रतिबद्धता व्यक्त की कि वह अपने राष्ट्रीय कानूनों और नीतियों को अभिसमय के अनुरूप बनाएगा। इसी अंतरराष्ट्रीय दायित्व के परिणामस्वरूप भारत में दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 जैसे व्यापक कानून का निर्माण हुआ।[34] इस प्रकार, अंतरराष्ट्रीय मानकों ने भारतीय विधिक ढाँचे को अधिक समावेशी और अधिकार–आधारित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

हालाँकि, अंतरराष्ट्रीय अभिसमयों की प्रभावशीलता इस बात पर निर्भर करती है कि सदस्य राष्ट्र उन्हें व्यवहारिक स्तर पर किस सीमा तक लागू करते हैं। कई विकासशील देशों की तरह भारत में भी अंतरराष्ट्रीय मानकों और जमीनी वास्तविकताओं के बीच अंतर देखने को मिलता है। इसके बावजूद, संयुक्त राष्ट्र दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अभिसमय, 2006 जैसे अंतरराष्ट्रीय दस्तावेज दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण हेतु एक नैतिक, विधिक और नीतिगत दिशा प्रदान करते हैं, जो राष्ट्रीय सुधारों के लिए एक सशक्त आधार बनते हैं।[35]

इस प्रकार, अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांग अधिकारों का अध्ययन न केवल वैश्विक मानकों को समझने में सहायक है, बल्कि यह राष्ट्रीय स्तर पर अधिकारों के बेहतर क्रियान्वयन हेतु प्रेरणा और मार्गदर्शन भी प्रदान करता है।

11. अधिकारों के क्रियान्वयन की वर्तमान स्थिति

दिव्यांगजनों के अधिकारों की कानूनी मान्यता और नीतिगत प्रावधानों के बावजूद भारत में उनके प्रभावी क्रियान्वयन की स्थिति मिश्रित रूप में देखी जाती है। दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 तथा संबंधित नीतियों का उद्देश्य दिव्यांगजनों को समान अवसर, गरिमा और सामाजिक सहभागिता सुनिश्चित करना है, किंतु व्यवहारिक स्तर पर अनेक चुनौतियाँ मौजूद हैं।[36]

(1) **शिक्षा क्षेत्र में क्रियान्वयन–** शिक्षा के अधिकार को संविधान और अधिनियम दोनों ने सुनिश्चित किया है। धारा 16 के अनुसार 6–18 वर्ष के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार है।[37] इसके बावजूद, कई दिव्यांग बच्चे विद्यालयों में समावेशी शिक्षा प्राप्त नहीं कर पाते। शैक्षिक संस्थाओं में सहायक उपकरणों की कमी, प्रशिक्षित शिक्षक की अभाव, भौतिक असुविधाएँ और जागरूकता की कमी प्रमुख बाधाएँ हैं।[38]

(2) **रोजगार एवं आजीविका–** सरकारी नौकरियों में दिव्यांगजनों के लिए 4 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान है।[39] तथापि, व्यावहारिक क्रियान्वयन में प्रशासनिक जटिलताएँ, जागरूकता की कमी और सामाजिक पूर्वाग्रह कारण बनते हैं कि कई योग्य दिव्यांगजन आरक्षण का लाभ नहीं उठा पाते। असंगठित क्षेत्र में रोजगार अवसर सीमित हैं और उन्हें पर्याप्त सुरक्षा एवं सामाजिक लाभ भी प्राप्त नहीं होते।

(3) **स्वास्थ्य एवं पुनर्वास–** स्वास्थ्य सेवाओं और पुनर्वास सुविधाओं तक पहुँच में असमानता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। सरकारी स्वास्थ्य केंद्रों में सहायक उपकरण, चिकित्सा सुविधाएँ और पुनर्वास कार्यक्रम

अपेक्षाकृत कम उपलब्ध हैं, विशेषकर ग्रामीण और दूरदराज़ क्षेत्रों में।[40] इस कारण दिव्यांगजन स्वास्थ्य एवं पुनर्वास के अधिकारों से पूर्ण लाभ नहीं प्राप्त कर पाते।

(4) **सामाजिक सुरक्षा और सुलभता–** सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ और सार्वजनिक स्थानों की सुलभता अधिनियम और नीति के अनुसार सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है, परंतु कई सार्वजनिक भवन, परिवहन और तकनीकी साधन अभी भी दिव्यांगजनों के लिए पूरी तरह सुलभ नहीं हैं। इसके अलावा, जागरूकता की कमी और प्रशासनिक निगरानी का अभाव क्रियान्वयन को प्रभावित करता है।[41] वर्तमान स्थिति यह दर्शाती है कि कानून और नीतियाँ उपलब्ध हैं, परंतु उनके क्रियान्वयन में प्रशासनिक, सामाजिक और संरचनात्मक बाधाएँ मौजूद हैं। इस अंतर को कम करना, दिव्यांगजनों के अधिकारों की वास्तविक सुरक्षा और समाज में उनकी पूर्ण सहभागिता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है।

12. क्रियान्वयन में आने वाली प्रमुख चुनौतियाँ

दिव्यांगजनों के अधिकारों की विधिक एवं नीतिगत मान्यता के बावजूद, उनके प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक व्यावहारिक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। ये चुनौतियाँ प्रशासनिक, सामाजिक, आर्थिक तथा जागरूकता से संबंधित कारकों के रूप में सामने आती हैं, जो कानून और व्यवहार के बीच अंतर को और अधिक स्पष्ट कर देती हैं।

(1) **प्रशासनिक चुनौतियाँ–** दिव्यांगजनों के अधिकारों के क्रियान्वयन में प्रशासनिक तंत्र की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, किन्तु व्यवहार में यह तंत्र कई स्तरों पर कमजोर दिखाई देता है। विभिन्न विभागों के बीच समन्वय का अभाव, स्पष्ट दिशा–निर्देशों की कमी तथा निगरानी तंत्र का प्रभावी न होना प्रमुख प्रशासनिक समस्याएँ हैं। कई बार योजनाओं का लाभ अंतिम लाभार्थी तक नहीं पहुँच पाता, जिससे अधिकारों की वास्तविक प्राप्ति बाधित होती है।[42] इसके अतिरिक्त, शिकायत निवारण तंत्र की सीमित प्रभावशीलता भी दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण में बाधक बनती है।

(2) **सामाजिक चुनौतियाँ–** सामाजिक दृष्टिकोण और मानसिकता दिव्यांगजनों के अधिकारों के क्रियान्वयन में एक बड़ी चुनौती के रूप में सामने आती है। दिव्यांगता को आज भी कई बार सहानुभूति, दया या अक्षमता के रूप में देखा जाता है, न कि समान अधिकारों वाले नागरिक के रूप में। इस प्रकार का दृष्टिकोण शिक्षा, रोजगार और सामाजिक सहभागिता में भेदभाव को जन्म देता है।[43] सामाजिक कलंक और भेदभाव दिव्यांगजनों के आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता को भी प्रभावित करते हैं।

(3) **आर्थिक चुनौतियाँ–** आर्थिक संसाधनों की कमी भी क्रियान्वयन में एक महत्वपूर्ण बाधा है। कई दिव्यांगजन आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि से आते हैं, जिससे वे शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और सहायक उपकरणों तक पर्याप्त पहुँच नहीं बना पाते। वहीं, सरकारी योजनाओं के लिए आवंटित संसाधनों की अपर्याप्तता और उनके असमान वितरण से भी दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया प्रभावित होती है।[44]

(4) **जागरूकता की कमी–** दिव्यांगजनों के अधिकारों और उपलब्ध योजनाओं के प्रति जागरूकता का अभाव क्रियान्वयन में सबसे गंभीर चुनौती मानी जा सकती है। अनेक दिव्यांगजन अपने वैधानिक अधिकारों, लाभों और शिकायत निवारण तंत्र से अनभिज्ञ रहते हैं। इसी प्रकार, समाज और प्रशासनिक अधिकारियों में भी दिव्यांगता से संबंधित कानूनों और नीतियों की पर्याप्त समझ का अभाव देखने को मिलता है।[45] जागरूकता

की यह कमी अधिकारों की वास्तविक प्राप्ति में प्रमुख अवरोध उत्पन्न करती है।

13. विभिन्न सरकारी योजनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन

दिव्यांगजनों के अधिकारों के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु भारत सरकार द्वारा समय–समय पर अनेक कल्याणकारी एवं सशक्तिकरणपरक योजनाएँ प्रारंभ की गई हैं। इन योजनाओं का उद्देश्य दिव्यांगजनों को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा तथा आत्मनिर्भरता के अवसर प्रदान करना है। यद्यपि ये योजनाएँ नीति–स्तर पर प्रगतिशील प्रतीत होती हैं, तथापि इनके व्यवहारिक क्रियान्वयन की स्थिति का विश्लेषण आवश्यक है।

प्रमुख योजनाओं में दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण हेतु राष्ट्रीय कार्य योजना, दिव्यांगजन सशक्तिकरण विभाग द्वारा संचालित योजनाएँ, सहायक उपकरणों की आपूर्ति योजना तथा दिव्यांगजनों हेतु छात्रवृत्ति योजनाएँ सम्मिलित हैं। सहायक उपकरणों की आपूर्ति योजना योजना का उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर दिव्यांगजनों को सहायक उपकरण उपलब्ध कराकर उनकी गतिशीलता और कार्यक्षमता में वृद्धि करना है।[46] यद्यपि यह योजना लाभकारी सिद्ध हुई है, किंतु सीमित बजट और वितरण तंत्र की जटिलताओं के कारण इसका लाभ सभी पात्र व्यक्तियों तक नहीं पहुँच पाता।

शिक्षा के क्षेत्र में केंद्र सरकार द्वारा प्री–मैट्रिक एवं पोस्ट–मैट्रिक छात्रवृत्ति योजनाएँ संचालित की जा रही हैं, जिनका उद्देश्य दिव्यांग विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा हेतु प्रोत्साहित करना है।[47] इन योजनाओं ने शैक्षिक सहभागिता को बढ़ावा दिया है, परंतु आवेदन प्रक्रिया की जटिलता, समय पर राशि का वितरण न होना तथा डिजिटल पहुँच की कमी जैसी समस्याएँ इनके प्रभाव को सीमित करती हैं।

रोजगार और आजीविका के संदर्भ में राष्ट्रीय दिव्यांग वित्त एवं विकास निगम (एन.एच.एफ.डी.सी.) द्वारा स्वरोजगार और कौशल विकास से संबंधित योजनाएँ लागू की गई हैं।[48] इन योजनाओं के माध्यम से ऋण, प्रशिक्षण और उद्यमिता को बढ़ावा देने का प्रयास किया गया है। तथापि, जमीनी स्तर पर जानकारी के अभाव और वित्तीय संस्थानों की अनिच्छा के कारण इन योजनाओं का अपेक्षित लाभ सीमित वर्ग तक ही सिमट कर रह जाता है।

सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में दिव्यांग पेंशन योजनाएँ एवं बीमा योजनाएँ दिव्यांगजनों को न्यूनतम आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने का प्रयास करती हैं। यद्यपि ये योजनाएँ दिव्यांगजनों के जीवन स्तर को कुछ हद तक स्थिरता प्रदान करती हैं, परंतु पेंशन राशि की न्यूनता और राज्यों के बीच असमान क्रियान्वयन एक गंभीर समस्या बनी हुई है।[49]

समग्र रूप से देखा जाए तो विभिन्न सरकारी योजनाएँ दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण की दिशा में एक सकारात्मक पहल हैं, किन्तु इनकी वास्तविक सफलता प्रभावी क्रियान्वयन, पारदर्शिता, पर्याप्त संसाधनों तथा लाभार्थियों की सक्रिय सहभागिता पर निर्भर करती है। अतः योजनाओं की निरंतर समीक्षा और सुधार दिव्यांगजनों के अधिकारों की सार्थक प्राप्ति के लिए अनिवार्य है।

14. न्यायालयीन हस्तक्षेप एवं महत्वपूर्ण निर्णय

भारतीय न्यायपालिका ने दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण एवं विस्तार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यद्यपि विधायिका द्वारा दिव्यांगजनों के लिए व्यापक कानूनों का निर्माण किया गया है, तथापि अनेक अवसरों पर इनके प्रभावी क्रियान्वयन में उत्पन्न कमियों को दूर करने हेतु न्यायालयों का हस्तक्षेप आवश्यक सिद्ध हुआ है। न्यायपालिका ने संविधान के समानता, गरिमा और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों की व्यापक व्याख्या करते हुए दिव्यांगजनों के अधिकारों को सुदृढ़ किया है।

सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट किया है कि दिव्यांगता के आधार पर किसी व्यक्ति को अवसरों से वंचित करना संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का उल्लंघन है। जीविका का अधिकार और गरिमापूर्ण जीवन की अवधारणा का विस्तार करते हुए न्यायालय ने यह माना है कि दिव्यांगजन भी समान नागरिक हैं और उन्हें शिक्षा, रोजगार तथा सार्वजनिक जीवन में समान सहभागिता का अधिकार प्राप्त है।[50]

राष्ट्रीय ***महासंघ बनाम संघ सरकार*** के वाद में सर्वोच्च न्यायालय ने दिव्यांग व्यक्तियों के लिए सरकारी सेवाओं में आरक्षण संबंधी प्रावधानों के प्रभावी क्रियान्वयन पर बल दिया। न्यायालय ने यह निर्देश दिया कि आरक्षण केवल कागजी प्रावधान न रह जाए, बल्कि उसे वास्तविक रूप से लागू किया जाए।[51] यह निर्णय दिव्यांगजनों के रोजगार अधिकारों के संदर्भ में एक मील का पत्थर माना जाता है।

इसी प्रकार, ***विकास कुमार बनाम संघ लोक सेवा आयोग*** के प्रकरण में न्यायालय ने "युक्तिसंगत समायोजन" की अवधारणा को मान्यता देते हुए यह कहा कि दिव्यांग अभ्यर्थियों को परीक्षा एवं चयन प्रक्रिया में आवश्यक सहूलियत प्रदान करना समानता के अधिकार का अभिन्न अंग है।[52] इस निर्णय ने शैक्षिक और प्रतिस्पर्धात्मक परीक्षाओं में दिव्यांगजनों के अधिकारों को नया आयाम दिया।

उच्च न्यायालयों ने भी समय–समय पर दिव्यांगजनों के अधिकारों से संबंधित मामलों में सक्रिय भूमिका निभाई है। अनेक निर्णयों में सार्वजनिक भवनों, परिवहन और शैक्षणिक संस्थानों को दिव्यांगजनों के लिए सुलभ बनाने के निर्देश दिए गए हैं।[53] इन न्यायिक हस्तक्षेपों ने प्रशासनिक तंत्र को अपनी संवैधानिक जिम्मेदारियों के प्रति अधिक उत्तरदायी बनाया है।

अतः न्यायपालिका ने न केवल दिव्यांगजनों के अधिकारों की व्याख्या को व्यापक बनाया है, बल्कि उनके क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने हेतु राज्य पर सकारात्मक दायित्व भी आरोपित किए हैं। तथापि, यह भी स्पष्ट है कि दीर्घकालिक समाधान के लिए न्यायिक हस्तक्षेप के साथ–साथ प्रभावी प्रशासनिक कार्रवाई और सामाजिक जागरूकता समान रूप से आवश्यक हैं।

15. अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध अध्ययन के माध्यम से भारतीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगजनों के अधिकारों एवं उनके क्रियान्वयन से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण तथ्य और निष्कर्ष सामने आए हैं। इन निष्कर्षों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि भारत में दिव्यांगजनों के लिए एक व्यापक संवैधानिक, विधिक और नीतिगत ढाँचा उपलब्ध है, किंतु उसकी व्यवहारिक प्रभावशीलता अभी भी सीमित है।

अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि भारतीय संविधान के मौलिक अधिकार, राज्य के नीति–निर्देशक तत्व तथा सामाजिक न्याय के सिद्धांत दिव्यांगजनों के अधिकारों को सुदृढ़ आधार प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 ने दिव्यांगजनों को समानता, गरिमा और अवसर की समानता का विधिक संरक्षण प्रदान किया है। तथापि, इन अधिकारों की वास्तविक प्राप्ति जमीनी स्तर पर समान रूप से सुनिश्चित नहीं हो पा रही है।[54]

शोध से यह भी स्पष्ट हुआ है कि शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा जैसे प्रमुख क्षेत्रों में दिव्यांगजनों को अभी भी अनेक व्यावहारिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। समावेशी शिक्षा की अवधारणा नीति स्तर पर स्वीकार की गई है, किन्तु शैक्षणिक संस्थानों में आवश्यक संसाधनों, प्रशिक्षित शिक्षकों और सुलभ अवसंरचना की कमी इसके प्रभावी क्रियान्वयन में बाधा बन रही है।[55]

रोजगार के क्षेत्र में आरक्षण और कौशल विकास संबंधी योजनाओं के बावजूद, दिव्यांगजनों की कार्यबल में

भागीदारी अपेक्षाकृत कम पाई गई है। प्रशासनिक उदासीनता, सामाजिक पूर्वाग्रह और निजी क्षेत्र में स्पष्ट दिशा–निर्देशों के अभाव के कारण रोजगार के अवसर सीमित बने हुए हैं।[56]

अध्ययन यह भी दर्शाता है कि सरकारी योजनाएँ और कार्यक्रम दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण की दिशा में सकारात्मक प्रयास हैं, किन्तु योजनाओं की जानकारी का अभाव, जटिल प्रक्रियाएँ तथा राज्यों के बीच असमान क्रियान्वयन इनके लाभ को सीमित कर देता है।[57] इसके साथ ही, आर्थिक संसाधनों की अपर्याप्तता और निगरानी तंत्र की कमजोरी भी एक प्रमुख निष्कर्ष के रूप में सामने आई है।

न्यायिक निर्णयों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि भारतीय न्यायपालिका ने दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण और विस्तार में एक सक्रिय भूमिका निभाई है। न्यायालयों ने समानता और गरिमापूर्ण जीवन की व्याख्या को व्यापक बनाते हुए राज्य पर सकारात्मक दायित्व आरोपित किए हैं।[58] तथापि, केवल न्यायिक हस्तक्षेप के माध्यम से दीर्घकालिक समाधान संभव नहीं है, जब तक कि प्रशासनिक तंत्र और समाज समान रूप से संवेदनशील न हों।

समग्र रूप से, अध्ययन का प्रमुख निष्कर्ष यह है कि भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों के लिए विधिक और नीतिगत ढाँचा पर्याप्त रूप से विकसित हो चुका है, किंतु उनके प्रभावी क्रियान्वयन हेतु प्रशासनिक सुधार, सामाजिक जागरूकता, आर्थिक संसाधनों की उपलब्धता और संस्थागत जवाबदेही को सुदृढ़ करना अत्यंत आवश्यक है।

16. उपसंहार

प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य भारतीय परिप्रेक्ष्य में दिव्यांगजनों के अधिकारों तथा उनके क्रियान्वयन की वास्तविक स्थिति का विश्लेषण करना था। अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से सामने आता है कि भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों को संवैधानिक, विधिक एवं नीतिगत स्तर पर पर्याप्त मान्यता प्रदान की गई है। भारतीय संविधान के मौलिक अधिकार, राज्य के नीति–निर्देशक तत्व तथा सामाजिक न्याय की अवधारणा दिव्यांगजनों को समानता, गरिमा और अवसर की समानता का अधिकार सुनिश्चित करने का सशक्त आधार प्रदान करते हैं।

दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 ने दिव्यांगजनों को अधिकार–आधारित दृष्टिकोण के अंतर्गत लाकर उनकी पहचान को कल्याणकारी लाभार्थी से अधिकारधारी नागरिक के रूप में स्थापित किया है। इस अधिनियम के माध्यम से शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा एवं सुलभता जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण प्रावधान किए गए हैं। तथापि, अध्ययन यह दर्शाता है कि विधिक प्रावधानों और उनके व्यवहारिक क्रियान्वयन के मध्य एक स्पष्ट अंतर विद्यमान है।

शोध के दौरान यह भी पाया गया कि प्रशासनिक अक्षमताएँ, सामाजिक पूर्वाग्रह, आर्थिक संसाधनों की सीमित उपलब्धता तथा जागरूकता की कमी दिव्यांगजनों के अधिकारों के प्रभावी क्रियान्वयन में प्रमुख बाधाएँ हैं। यद्यपि सरकार द्वारा विभिन्न योजनाएँ और कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं, किंतु उनके लाभ सभी पात्र दिव्यांगजनों तक समान रूप से नहीं पहुँच पा रहे हैं।

न्यायपालिका ने दिव्यांगजनों के अधिकारों के संरक्षण एवं विस्तार में सक्रिय भूमिका निभाई है। न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णयों ने समानता, गरिमापूर्ण जीवन और युक्तिसंगत समायोजन जैसी अवधारणाओं को सुदृढ़ किया है तथा राज्य पर सकारात्मक दायित्व आरोपित किए हैं। फिर भी, यह स्पष्ट है कि केवल न्यायिक हस्तक्षेप से दीर्घकालिक समाधान संभव नहीं है, जब तक कि प्रशासनिक इच्छाशक्ति और सामाजिक संवेदनशीलता समान रूप से विकसित न हों।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत द्वारा संयुक्त राष्ट्र दिव्यांग

व्यक्तियों के अधिकारों पर अभिसमय, 2006 को अंगीकार किया जाना एक महत्वपूर्ण कदम है, किंतु इसके प्रावधानों का पूर्ण और प्रभावी अनुपालन अभी भी एक चुनौती बना हुआ है।

समग्रतः, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारत में दिव्यांगजनों के अधिकारों के लिए एक मजबूत विधिक और नीतिगत ढाँचा विद्यमान है, परंतु उसकी सफलता प्रभावी क्रियान्वयन, प्रशासनिक सुधार, सामाजिक जागरूकता और दिव्यांगजनों की सक्रिय सहभागिता पर निर्भर करती है। एक समावेशी और न्यायपूर्ण समाज की स्थापना तभी संभव है जब दिव्यांगजनों को समान अधिकार, सम्मान और अवसर प्रदान किए जाएँ और उन्हें समाज की मुख्यधारा में पूर्ण सहभागिता का अवसर मिले।

17. सुझाव एवं सुधारात्मक उपाय

दिव्यांगजनों के अधिकारों के प्रभावी संरक्षण और उनके समुचित क्रियान्वयन हेतु केवल विधिक प्रावधान पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि व्यवहारिक, प्रशासनिक और सामाजिक स्तर पर समन्वित प्रयास आवश्यक हैं। प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर निम्नलिखित सुझाव एवं सुधारात्मक उपाय प्रस्तावित किए जा सकते हैं–

(1) प्रशासनिक तंत्र को अधिक उत्तरदायी और संवेदनशील बनाए जाने की आवश्यकता है। दिव्यांगजनों से संबंधित कानूनों और नीतियों के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु केंद्र और राज्य स्तर पर स्पष्ट दिशा–निर्देश, नियमित निगरानी और मूल्यांकन तंत्र विकसित किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, शिकायत निवारण तंत्र को सुदृढ़ कर समयबद्ध न्याय सुनिश्चित करना आवश्यक है।

(2) शिक्षा के क्षेत्र में समावेशी शिक्षा को वास्तविक रूप से लागू करने हेतु विद्यालयों और उच्च शिक्षण संस्थानों में सुलभ अवसंरचना, सहायक उपकरण तथा प्रशिक्षित शिक्षकों की व्यवस्था अनिवार्य की जानी चाहिए। डिजिटल शिक्षा के बढ़ते प्रभाव को देखते हुए दिव्यांगजनों के लिए सुलभ तकनीकों का विकास और प्रसार भी आवश्यक है।

(3) रोजगार के क्षेत्र में दिव्यांगजनों की भागीदारी बढ़ाने के लिए आरक्षण प्रावधानों के कठोर अनुपालन के साथ–साथ निजी क्षेत्र को भी उत्तरदायी बनाने हेतु प्रभावी नीतिगत उपाय किए जाने चाहिए। कौशल विकास, स्वरोजगार और उद्यमिता को प्रोत्साहन देने वाली योजनाओं को सरल और सुलभ बनाया जाना चाहिए।

(4) सामाजिक स्तर पर दिव्यांगता के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना अत्यंत आवश्यक है। जागरूकता अभियानों, शैक्षिक पाठ्यक्रमों और मीडिया के माध्यम से दिव्यांगजनों को अधिकारधारी नागरिक के रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए, न कि दया या सहानुभूति के पात्र के रूप में।

(5) अंतरराष्ट्रीय मानकों, विशेष रूप से संयुक्त राष्ट्र दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अभिसमय, 2006 के अनुरूप भारतीय विधिक एवं नीतिगत ढाँचे की निरंतर समीक्षा की जानी चाहिए। इससे दिव्यांगजनों के अधिकारों को वैश्विक मानकों के अनुरूप और अधिक सुदृढ़ बनाया जा सकेगा।

(6) अंततः, दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया में स्वयं दिव्यांगजनों और उनके संगठनों की सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित की जानी चाहिए। उनकी वास्तविक आवश्यकताओं और अनुभवों को नीति–निर्माण और क्रियान्वयन की प्रक्रिया में सम्मिलित करना एक समावेशी और न्यायपूर्ण समाज की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा।

सन्दर्भ सूची

[1] भारत सरकारः दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, अधिनियम संख्या 49, 2016।

[2] उपेन्द्र बक्सीः भारतीय विधि प्रणाली का संकट, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1982, पृ. 117।
[3] विधि आयोगः भारत सरकार, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार, 164वीं रिपोर्ट, भारत सरकार, 1998, पृ. 5।
[4] रेणु अड्डलखाः दिव्यांगता और समाजः एक पाठक, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2010, पृ. 21।
[5] ग्रैनविल ऑस्टिनः भारतीय संविधानः एक राष्ट्र की आधारशिला, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1966, पृ. 84।
[6] भारत सरकारः दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, अधिनियम संख्या 49, 2016।
[7] विधि आयोगः भारत सरकार, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार, 164वीं रिपोर्ट, भारत सरकार, 1998, पृ. 12।
[8] भारत सरकारः दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, अधिनियम संख्या 49, 2016।
[9] विधि आयोगः भारत सरकार, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार, 164वीं रिपोर्ट, भारत सरकार, 1998, पृ. 18।
[10] रेणु अड्डलखाः दिव्यांगता और समाजः एक पाठक, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2010, पृ. 45।
[11] संयुक्त राष्ट्रः दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अभिसमय (UNCRPD), 2006, प्रस्तावना।
[12] माइकल ऑलिवरः दिव्यांगता की राजनीति, मैकमिलन प्रेस, लंदन, 1990, पृ. 11।
[13] धारा 2(स)ः दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, अधिनियम संख्या 49, 2016, भारत सरकार।
[14] भारत सरकारः दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, अनुसूची।
[15] रेणु अड्डलखाः दिव्यांगता और समाजः एक पाठक, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2010, पृ. 32।
[16] The National Sample Survey Office (NSSO)
[17] भारत सरकार, जनगणना 2011ः दिव्यांगता पर आँकड़े, रजिस्ट्रार जनरल एवं जनगणना आयुक्त, भारत।
[18] वही।
[19] वही।
[20] राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन, दिव्यांगता पर रिपोर्ट, 76वाँ दौर, सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार।
[21] सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालयः भारत सरकार, दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण पर वार्षिक रिपोर्ट, नवीनतम संस्करण।
[22] ग्रैनविल ऑस्टिनः भारतीय संविधानः एक राष्ट्र की आधारशिला, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1966, पृ. 95।
[23] मेनका गांधी बनाम भारत संघ, (1978) 1 SCC 248।
[24] अनुच्छेद 38 एवं 41ः भारत का संविधान, 1950।
[25] एस. पी. सत्यप्रकाशः भारतीय न्यायपालिका और सामाजिक न्याय, ईस्टर्न बुक कंपनी, लखनऊ, 2004, पृ. 162।
[26] संयुक्त राष्ट्र, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अभिसमय (UNCRPD), 2006।
[27] भारत सरकारः दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, अधिनियम संख्या 49, 2016।
[28] सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालयः भारत सरकार, राष्ट्रीय दिव्यांगजन नीति, भारत सरकार।
[29] धारा 16ः दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, भारत सरकार।
[30] भारत सरकारः कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, दिव्यांगजनों के लिए आरक्षण संबंधी दिशा–निर्देश, नवीनतम परिपत्र।
[31] जैक डोनेलीः अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार, वेस्टव्यू प्रेस, बोल्डर, 2003, पृ. 97।
[32] संयुक्त राष्ट्रः दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों की घोषणा, 1975।
[33] संयुक्त राष्ट्रः दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर अभिसमय, 2006।
[34] वही।
[35] विधि आयोगः भारत सरकार, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार, 164वीं रिपोर्ट, भारत सरकार, 1998, पृ. 7।
[36] भारत सरकार, दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, अधिनियम संख्या 49, 2016।
[37] धारा 16ः वही।
[38] राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठनः दिव्यांगता पर रिपोर्ट, 76वाँ दौर, सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार।
[39] भारत सरकारः कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, दिव्यांगजनों के लिए आरक्षण संबंधी दिशा–निर्देश, नवीनतम परिपत्र।
[40] सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालयः भारत सरकार, दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण पर वार्षिक रिपोर्ट, नवीनतम संस्करण।
[41] वही।
[42] विधि आयोगः भारत सरकार, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार, 164वीं रिपोर्ट, भारत सरकार, 1998, पृ. 18।
[43] रेणु अड्डलखाः दिव्यांगता और समाजः एक पाठक, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2010, पृ. 56।
[44] सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण पर वार्षिक रिपोर्ट, नवीनतम संस्करण।
[45] राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठनः दिव्यांगता पर रिपोर्ट, 76वाँ दौर, सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार।
[46] सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालयः भारत सरकार, सहायक उपकरणों की आपूर्ति योजना (ए.डी.आई.पी.), भारत सरकार।
[47] सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालयः भारत सरकार, दिव्यांग विद्यार्थियों हेतु छात्रवृत्ति योजनाएँ, भारत सरकार।
[48] राष्ट्रीय दिव्यांग वित्त एवं विकास निगम, वार्षिक प्रतिवेदन, भारत सरकार।
[49] विधि आयोग, भारत सरकार, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार, 164वीं रिपोर्ट, भारत सरकार, पृ. 26।
[50] फ्रांसिस कोराली मुलिन बनाम दिल्ली प्रशासन, (1981)1 एस.सी.सी. 608।
[51] राष्ट्रीय महासंघ बनाम संघ सरकार, (2013) 10 एस.सी.सी. 772।
[52] विकास कुमार बनाम संघ लोक सेवा आयोग, (2021)5 एस.सी.सी. 370।
[53] एस. पी. सत्यप्रकाश, भारतीय न्यायपालिका और सामाजिक न्याय, ईस्टर्न बुक कंपनी, लखनऊ, 2004, पृ. 176।
[54] भारत सरकार, दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016, अधिनियम संख्या 49, 2016।
[55] राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन, दिव्यांगता पर रिपोर्ट, 76वाँ दौर, सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार।
[56] विधि आयोगः भारत सरकार, दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकार, 164वीं रिपोर्ट, भारत सरकार, पृ. 24।
[57] सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, दिव्यांगजनों के सशक्तिकरण पर वार्षिक रिपोर्ट, नवीनतम संस्करण।
[58] राष्ट्रीय महासंघ बनाम संघ सरकार, (2013)10 एस.सी.सी. 772।

****